International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2017; Page No. 20-22

स्त्री मुक्ति और अस्मिता की पहचान

Dr. Prachi Singh
734- Neha Nagar, Makronia Sagar, Madhya Pradesh, India

प्रस्तावना

स्त्री जीवन के चित्रण के संदर्भ में एक नया मोड़ आजादी के बाद के दषकों में तब आया जब पहली बार स्त्री ने रचना के क्षेत्र में, भक्तिकाल की अपनी विरल उपस्थिति को नये समय संदर्भ में सघन करते हुए अपने हाथ में फिर से कलम पकड़ी और अपने मन को, अपनी आकांक्षाओं को, अपनी अस्मिता से जुड़े सवालों को, अपने जीवन संदर्भों और जीवन संघ को, अपनी घुटन, तड़प और विद्यमान वास्तविकता के प्रति अपने प्रतिरोध को, अपनी भाषा और अपने लहजे में खुद लिखना शुरू किया । इसके पीछे न तो पश्चिम का नारीवाद था और न ही कोई अन्य उपक्रम। यह वास्तविकता के खिलाफ एक ऐसे अभियान को रूप देना था, समाज और उसके यथास्थितिवाद की पोषक शक्तियां जिसकी नोटिस लें। यह बदलते हुए समय की मांग थी। तमाम कुछ वैसा ही रहने और बदतर होने के बावजूद आजादी के बाद कुछ नया, अर्थवान भी सामने आया था जिसके तहत अपने वजूद के प्रति सजग एक स्त्री भी सामने आई थी– महानगरों, नगरों और कस्बों में ही नहीं, गंवई–गांवों में भी , अपनी पूरी जाति की भावनाओं को सामने लाने वाली इस तरह एक नये लेखन का रूप उभरा, जिसे स्त्री लेखन की पहचान मिली। परम्परागत पुरूष–मानस ने इस वास्तविकता को भी झुठलाना चाहा। आदर्ष वाक्य की तरह कहा गया कि रचना को स्त्री–पुरूष कटघरे में बांटना सही नहीं है, परन्तु उसके उपक्रम व्यर्थ गए। स्त्री के हाथ में कलम आ चुकी थी। उसने हर विद्या में लिखा है उपन्यास तो लोकतंत्र की उपज है । उसके महाकाव्यात्मक पटल पर उसका जिया– भोगा, उसका अनुभूत और बदले हुए समय में उसका अर्जित, यह सब उसमें अधिक विशद बनकर उभरा । एक के बाद एक , नई सदी की शुरूआत तक, जिस तरह स्त्री –कथाकारों की रचनाएं सामने आई और अपने पूरे महत्व के साथ पहचानी गई, स्त्री लेखन के वजूद को अस्वीकार करना संभव नहीं रहा।

स्वतंत्रता के बाद का सारा स्त्री लेखन, स्त्री मुक्ति और अस्मिता के पहचान की संघर्ष गाथा के रूप में विकसित हुआ। स्त्रियें ने आत्मान्वेषण के मार्ग में अपने को ढूढने के प्रयास में अपने जीवन के अंधेरे कोने और जटिलताओं का साहित्य रचा। वैसे तो स्त्री लेखन एक पुरातन परंपरा रही है पर सामाजिक रूढ़ियों के चलते पहले वह अपने लेखन को प्रदर्षित कर पाने में असमर्थ थी। परिवर्तन की प्रक्रिया में उसके लेखन में कई मोड़ आए, उसने यह समझ लिया कि व्यवस्था पुरूषों की सुविधाओं पर टिकी है। जिसमें स्त्रियाँ उनके लिए एक साधन मात्र हैं। स्त्रियों ने वैचारिक और सामाजिक स्तरों पर इस स्थिति का विरोध किया। एक नई चेतना विकसित हुई जहां स्त्रियों ने मन के उद्वेग हलचल और रिश्तों की तोड़ फोड़ का साहित्य रचा। यह वह समय था जब जीवन यथार्थ से स्त्री की एक नई पहचान हुई तथा स्त्रियों को अभिव्यक्ति की एक नई भाव दृष्टि प्राप्त हुई ।

आज की शिक्षित नारी अपनी अनुभूतिओं को शब्दों में प्रकट करना जान गई है। इस अर्थ में वह अपनी दादी–नानी के जमाने से बहुत आगे निकल आई है भावनाओं को खुलकर व्यक्त कर पाना वैसे आसान कार्य नहीं होता पर साहित्य के माध्यम से महिलाऐं अपने अंतर्मन की व्यथा को व्यक्त कर पाने में समर्थ है। अभिव्यक्ति मनुष्य की सहजवृत्ति है वस्तुतः देखा जाता है कि नारी को जीवन में जो कुछ चाहा अनचाहा मिलता है बस वह उसे ही अपनी लेखनी के माध्यम से कागज पर उतारनें या अभिव्यक्त करनें का पूरा प्रयास करती है किन्तु इसका यह तात्पर्य कतई नहीं कि उसका दायरा केवल अपने तक ही सीमित है। नारी ने जीवन के विविध क्षेत्रों की भांति साहित्य के क्षेत्र को भी अपनी प्रतिभा से संमृद्ध किया है। यद्यपि मध्यकाल में कथालेखन नहीं था पर मीरा की अभिव्यक्ति को नकारा नहीं जा सकता । अनुभूतियों को अपने में समाहित करके रखने वाली मीरा के बिना हिन्दी साहित्य का लालित्य, अघूरा माना जायेगा। स्वतंत्रता के पश्चात भारत के आर्थिक और राजनैतिक संदर्भों के बदलाव के साथ साथ हिन्दी कहानी लेखन के क्षेत्र में बहुत तेजी से विस्तार हुआ । यह विस्तार सकारात्मक था क्योंकि इस क्षेत्र महिला कथाकारों ने अपनी लेखकीय संवेदना, बोध और क्षमता के साथ नारी जीवन विषयों पर केन्द्रित, अपनी खास अनुभूतियों को कहानी का मुख्य विष्य वस्तु बनाया।

पुर्नजागरण की प्रक्रिया में नारी जीवन में जो सुधार परिलक्षित हुए, चाहे वे शिक्षा, स्वतंत्रता, नारी पुरूष संबंधों के विभिन्न कोण जैसे मित्र, सहकर्मी, की प्रक्रिया को महिला कथाकारों ने बहुत बारीकि से पकड़कर अपनी कहानियों में चित्रित किया। महिला कथाकारों ने एक ओर भारतीय परंपरा, पुरूष प्रधान समाज और दूसरी ओर आधुनिक युग को नारी की मानसिकता पर प्रभाव को बखूबी चित्रित किया है इन लेखिकाओं की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह कही जा सकती है कि उनमें अनुभव से सीधे साक्षात्कार करनें और साहस के साथ उसे अभिव्यक्ति कर देने की क्षमता है।

स्वतंत्रोत्तर महिला कथाकारों में दिनेश नंदिनी ,डालमिया, मन्नू, भंडारी, ऊषा प्रियवंदा, कृष्णा सोवती, शशिप्रथा शास्त्री, निरूपमा सेवती, मालती जोशी, राजी सेठ, इंदु जैन के बाद अगली पीढ़ी जिनका जन्म स्वतंत्रता के आसपास हुआ – सुधा अरोड़ा, स्नेहमयी चौधरी, मंजुल भगत, मृदुला गर्ग, चन्द्रकांता, कुसुम अंसल, नासिरा शर्मा, मेहरून्निसा परवेज, प्रभा खेतान, ममता कालिया, इत्यादि लेखिकायें हैं।

स्वातंत्रयोत्तर कथा लेखिकाओं में मन्नू भंडारी की कहानियां अपने समय और समाज का प्रमाणिक दस्तावेज कही जा सकती है क्योंकि इनकी कहानियों में उस समय के समाज का प्रतिबिम्ब देखने को मिलता है । मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों में मध्यम और निम्न वर्गीय समाज की दैनिक जीवन की घटनाओं को अपनी कथा वस्तु का मुख्य आधार बनाया है। इनकी कहानियों में नारी का संघर्ष अनेक रूपों में देखने को मिलता है। कहीं नारी व्यक्ति के पुरातन या परंपरावादी संस्कारों के कारण, कहीं आधुनिकता के मोह में फंसी हुई भारतीय नारियों की विसंगतियों के कारण, कहीं पति–पत्नि के मध्य दांपत्य संबंधों में आने वाली रिक्तता अथवा प्रेम संबंधों को लेकर नैतिकता की अवधारणाओं के कारण संर्घषमय प्रतीत होती है। 'तीन निगाहों की एक तस्वीर,' कहानी की नायिका

'नैना' पति की दीर्ध रूग्णावस्था के कारण अतृप्त लालसाओं का आधार बनती है।

उषा प्रियवंदा के लेखन में भारतीय और पाश्चात्य मूल्यों का द्वंद और उनसे मुक्त होने के प्रयास दिखाई देता है। 'पचपन खम्बे लाल दीवारे' की नायिका भारतीय नारी के पारंपरिक छवि को नहीं तोड़ पाती जबकि 'रूकोगी नहीं राधिका' की नायिका इस घेरे से बाहर निकल जाती है अमेरिकी समाज में स्त्री की स्थिति पर वे लिखती है अमेरिका में स्त्री भलेही घर छोड़कर बाहर आ गई हो, उसके विचारो की स्थिति में अधिक परिवर्तन नही हुआ है प्रौढ़ होने पर पहली पत्नी को कम उम्र की एक लड़की के लिए छोड़ देना यहॉ आम फैशन है। इसलिए असुरक्षा स्त्री के मन में हमेशा बनी रहती है और इसी के कारण हर दूसरी स्त्री, जो उससे उम्र में कम या सकल सूरत में अच्छी है, उसे अपनी प्रतिद्वंदी मालूम पड़ती है।

स्त्रियों में अपने लेखन के माध्यम से प्रखर और प्रबुद्ध नारी पात्रों की सृष्टी की जो अपने लिए निर्णय लेने का सामर्थ्य रखती है जो अपने सुख और इच्छा को वर्जनामुक्त होकर स्वीकार करती हैं मंजुल भगत की एक कहानी 'बानो' को उद्घृत किया जा सकता है। जहॉ भरे पूरे परिवार में, बहुओं, पोतो–पातियों वाले घर में जहां खाता–कमाता पति है वहां पर भी वह अलग–थलग हो अपने सुख की परिभाषा स्वयं रचती है। स्त्री की सुखीभव का आर्शीवाद तो दिया जाता है परंतु घर के सारे सुख और वैभव के बीच उसका अपना सुख शामिल नहीं होता। दिनेष नंदनी डालमिया का उपन्यास ऐसी स्त्री की संघर्ष की अभिव्यक्ति है। इसी परम्परा में परंतु चिंतन में उससे आगे 'प्रभा खेतान' का उपन्यास 'छिन्नमस्ता' है। इसके केन्द्र में उच्चवर्गीय मारवाडी परिवार है इस परिवार का पुरूष तंत्र पूणतः स्त्री विरोधी है। इसी परिवार में प्रिया नामक एक नारी पात्र है । बचपन से अपने ही घर के सदस्य द्वारा सहे उत्पीड़न के कारण उसमें विरोध की आग उद्दीप्त होती है। फिर वह भावात्मक परिपक्वता और वैचारिक सजगता के साथ शिक्षा प्राप्त कर स्त्री शोषण के विरोध में खड़ी होती है और आत्मनिर्भर होकर अपने व्यवसाय में अर्न्तराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त करती है।

स्वतंत्रोत्तर कहानी लेखिकाओं में कृष्णासोबती, ने नारी जीवन के जिन बिन्दुओं को अपनी कहानी के माध्यम से स्पर्श किया है। अभिव्यक्ति बैलोसपन ने उन्हें बहुचर्चित बना दिया है । प्रेम क्षेत्र में वे रोमांटिक बोध से आधुनिक बोध की ओर तथा आत्मिकता से शारीरिकता की ओर आई है । नारी जीवांकन पर कृष्णाजी ने अपने उपन्यास 'डार से बिछुड़ी' शीर्षक में एक लघु आंचलिक कथा की रचना की है । इस उपन्यास में एक भील और अल्हड नवयुवती को अपनी माता के पाप के स्वरूप अपने कष्ट सहने पड़े । अपने परिवार की शाखा से वह ऐसी वियुक्त हुई कि संगी न साथी और न कोई आश्रय, ऐसी परिस्थितियों में घात– प्रतिघात के उपरान्त कृष्णाजी ने इस नव युवती के जीवन में सुखद संयोग का आगमन और उस सब का चित्रांकन बखूबी किया है।

सोबती जी ने इस सदी की महत्वपूर्ण उपन्यास लेखन की मुकम्मल तस्वीर, नारी की विविध समस्याओं को गहराई से रेखांकित किया है चाहे 'मित्रों मरजानी' हो या 'सूरजमूखी अंधेरे के' हो या 'डाल से बिछुड़ी' की पाषों 'दिलो दानिश' की महकबानों कुटुम्ब प्यारी सभी स्त्री पात्रों के माध्यम से कृष्णा सोवती ने नारी की विविध पीड़ाओं और पितृसत्तातमक समाज की यातनाओं को भोगती स्त्री के प्रमाणिक चित्र प्रस्तुत किये है। कृष्णा सोवती की 'मित्रो मरजानी' स्त्री के एक ऐसे रूप को प्रस्तुत करती है जो स्त्री मुक्ति के बौध्दिक और किताबी आन्दोलनों की पोल खोलती हुई अपनी मिट्टी से अपने रिष्ते के कारण ही इतनी जीवन्त, हाड मांस की सचमुच की स्त्री है। वह अपनी दैहिक जरूरतों के प्रति सजग और उनकी मुखर अभिव्यक्ति करती है स्त्री की अस्मिता और मुक्ति का प्रश्न प्रारंभ से ही कृष्णा जी की मुख्य रचनात्मक चिंता रही है। प्रेमावेग की दुर्दमता को वे गहरी अशक्ति के साथ अंकित करती है। सारे सामाजिक विधि निशेधों के कुल किनारों को ढ़हाता यह आवेग थोड़ी देर के लिए

भले बुरे की पहचान नष्ट करता हुआ बढ़ता है। सोबती जी स्त्री की अस्मिता और स्वत्व की लड़ाई को वे गंभीरता से लड़ती है। मैत्रेयी पुष्पा कहती है –''हम न तो देवी हैं न राक्षसी, न साध्वी, न कुलटा। हम जो भी है उसी रूप में हमें देखा जाए। पुरूष के नजरिये से नहीं, बल्कि मनुष्य के नजरिये से। 21 वी सदी में औरत स्वयं तय करेगी की उसे अपना जीवन कैसे चलाना है ? अपने शरीर को किसे सौंपना है ? लड़की पैदा हो या लड़का ? एक हो या दो ? ये ऐसी सारी वर्जनाओं और भय से मुक्त होकर वह स्वयं तय करेगी। जब इस समान धर्म संस्कृति पर विचार होगो तब निश्चय ही स्वस्थ साहित्य का सृजन होगा। सही मायनों में आजादी आयेगी, और तभी स्त्री के अपने आइन खुलेंगे। ठेठ ग्रामीण जीवन को पसंद करने वाली और ज्यादातर उसी पर केंद्रित लेखन करने वाली मैत्रेयी पुष्पा का सम्बन्ध बुन्देली धरती से रहा है। वहां की परम्पराए, सामाजिक, सांस्कृतिक स्थितियों से उनका गहरा सरोकार है – अपने पूर्ववर्ती उपन्यासों में मैत्रेयी ने बुन्देलखंड की अहीर कन्याओं की करूण नियति कथा, जो किसी न किसी रूप में नारी मात्र की नियती कथा है, इन कथाओं को मैत्रीय ने गहरी संवेदना के साथ प्रस्तुत किया है। उपन्यासकार के रूप में मैत्रीय की सच्ची पहचान ' इदन्नमम' से होती है। इदन्नमम की कथा करूणा का अतिक्रमण करती हुए जुझारू हो गयी है। सम्पूर्ण कथा यात्रा एक प्रकार से मंदा के जीवन की संघर्ष यात्रा है। इसमें नारी की तीन पीढियों का कथाचित्र है मुख्य रूप से दलितचेतना के परिश्कार में मंदा के चरित्र और व्यक्तितव की भूमिका का सर्वाधिक योगदान है। उपन्यास के कथानक के दो वैचारिक आधार – बिन्दु है एक ''जब तक मनुष्य आत्मरत रहता है, अपने दुखों से उभर पाता है। समश्टिगत प्रेम मानव का दुखों से बाहर खींचता है। दूसरा अपने हिस्से की लड़ाई जब तक हम दूसरों से लड़वाते रहेंगे तब तक उसकी कीमत हमें चुकानी पड़ेगी। अपने गांव सोनपुर में इन्ही दो संकल्पों के सहारे मंदाकिनी शोषितों और वंचितों के साथ जुड़ जाती है वह शेाषितों की नेता नहीं बनती बल्कि स्वयं की पीड़ा झेलती है और स्त्री होने की यातना भी सहती है। टूटती भी है लेकिन संभल जाती है और घूल झाड़कर खड़ी हो जाती है इस दृष्टि से देखें तो कुसुमा भाभी के चरित्र में अविश्वसनीय प्रत्यय है, लेकिन मंदाकिनी के चरित्र में विकास गति की सहजता है ।

मैत्रेयी पुष्पा पुरूषों को लेकर कहती है कि 'वे अपनी आजादी औरतो के जरिये चाहते हैं।' वे अपना अहम् औरतों के दम पर संतुष्ट करना चाहते हैं उन्हें मानवीय जीवन की सबसे अनमोल वस्तु प्रेम करनें की इजाजत भी नहीं है। मधु कॉकारिया की पीड़ा इस तरह उभरती है – ''हम जैसी लड़कियॉ प्रेम नहीं कर सकती क्योंकि हमारा प्रेम करना घर वालों के साथ विश्वासघात होगा। जिसका परिणाम मुझसे बड़ी बहिन एवं आने वाली स्त्री पीड़ी को भुगतना होगा।'' मैत्रेयी जी ने अपनी लेखनी के माध्यम से इस जीवन संग्राम में इसी पुरूष समाज के वर्चस्व को चुनौती दी है उनके बेतवा बहती रही, चाक, इदन्नमम, कही ईसुरी फाग, आत्मा कबूतरी आदि, उपन्यास स्त्री समाज के द्वारा नये मूल्यों का सृजन तो कर ही रहे है तथा जीवन के अनेक क्षेत्र में पुरूष प्रधान समाज को चुनौती दे रही है।

'चाक' में मैत्रेयी जी पुरूष समाज द्वारा नारियों पर हो रहे अत्याचार के खिलाफ नारी शक्ति को ही खड़ा करती है। लेकिन यह पुरूष समाज बर्दास्त नहीं कर पाता। यहां मैत्रेयी जी ने दो विशेषण प्रस्तुत किये हैं लोहे में ढली औरत और मांस मज्जा का बना आदमी लेकिन सच है कि जिस लोहे पर आदमी जितना घात करता है वह उतना ही परिपक्व होता है। इसी तरह जिस औरत

पर समाज जितना अत्याचार करेगा वह उतनी ताकत से संघर्ष के लिए खड़ी होगी। समकालीन जीवंत परिस्थितियां आज इसी नवीन परिवर्तन की अभिलाषी है जहां नारी को मात्र सती सावित्री या सीता के आदर्शो में जबरन न ढाला जाए बल्कि नारी को अपने स्वतंत्र अस्तित्व के विकास में प्रेात्साहन मिले।

इन लेखिकाओं के उपन्यास और कहानियों के माध्यम से कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता वाद की महिला हिन्दी कहानियों ने परम्परागत अनुभव परिधि से बाहर आकर नये अनुभवों और पहलुओं के उद्घाटन का प्रयास किया है। इन कथाकारों ने नारी जीवन के जिन खट्टे मीठे अनुभवों की अभिव्यक्ति जितनी सटीकता से की वह क्षमता और साहस महत्वपूर्ण है और सराहनीय है।

दरअसल नारी चेतना की मुहिम स्वयं नारी के लिये अपने अस्तित्व को मानवीय रूप में अनुभव करने और करवाने का आंदोलन है कि मैं भी मनुष्य हूँ और अन्य मनुष्यों की भांति समाज में सम्मानपूर्वक रहने की अधिकारी हूँ । उसे यह भी सुनिष्चित करना होगा कि हम अस्मिता की लड़ाई कैसे लड़े ? उसकी सामाजिक छवि कैसी हो ? चिंतन और साहित्य क क्षेत्र में पिछले पचास वर्षों में स्त्री के सवालों के जवाबों को तलाशने का काम शिद्दत से किया गया है। स्त्रियों की स्थिति के बारे में उनको एक पहचान देने के बारे में और उन्हें बराबरी का दर्जा देने के बारे में पुरूषों ने भी कुछ प्रयास किए हैं। पर इन प्रयासों को एक नया अर्थ तब मिला जब अपने बारे में स्वयं स्त्री ने सवाल उठाये और जवाब खोलने के प्रयत्न किए पुत्री, बहिन और माँ के रूप में अपनी पहचान से अलग उसने एक स्त्री के रूप में अपनी पहचान बनाने की कोशिश की। इसके लिए वह प्रयास कर रही है।

देश को आजादी मिलने के बाद स्त्री ने भी 'मुक्त' होने के प्रयास आरंभ किये। स्त्री को गुलाम बनाने की प्रक्रिया उसकी देह से शुरू होती है। पहले देह को जकडन में लिया जाता है, दैहिक रूप से उसे कमजोर सिद्ध किया जाता है फिर मानसिक रूप से स्त्री ने मुक्त होने के प्रयास आरंभ किए । तो मानसिक रूप से उसे आजाद खयाल होने की जरूरत हुई ही, उसे लगा देह को भी पुरूष के नियंत्रण से बाहर लाना होगा ।

महिला रचनाकारों के लेखन ने स्त्री समुदाय के बीच होने वाली बातों को रेखांकित करते हुए स्त्री विडम्बना पर कई प्रश्न भी खड़े किये हैं। कृष्णा सोवती ने 'मित्रों मरजानी' के चरित्र द्वारा एक मध्यम वर्गीय महिला का चित्र उपस्थित किया है जो कुण्ठाओं में दम ले रही है। इतनी सहजता तथा बारीकी से स्त्री जीवन को लेकर लिखने की बेवाक पहल हो चुकी थी अब स्त्रियों की वे बातें जो पर्दे में छिपी थी खुलकर सामने आयी। वेसे सच ही तो है कि स्त्री जीवन की सारी बातें स्त्री ही तो समझ सकती है जैसी भी हो स्त्री धर्म को महिला लेखन ने पूरी सच्चाईयों के साथ उजागर किया है। यह एक सशक्त कदम कहा जा सकता है ।

आज हम देख रहे है कि इन लेखिकाओं के माध्यम से स्त्री अनुभव विचार की आंच में तपकर विमर्श तक पहुंचा है उसके भीतर की हलचल ने समाज में दाम्पत्य, मातृत्व घर और पति से अलग उसकी निश्चित भूमिका निर्धारित करने की पहल की है। अपने पूरे वजूद के साथ औरत अपने विमर्श को जीवन पद्धति बनाने के लिए व्याकुल है वह अपनी छवि को आज नये सिरे से परिभाषित कर रही है।

यह कहा जा सकता है कि आज की स्त्री का यह सांस्कृतिक संस्क्रमण है। जहां वह अपनी धुरी पर स्थित रहकर सामाजिक शक्तियों से लड़ने और बदलने की अपनी आकांक्षाओं को अपने द्वारा रचित पात्रों में पूरा कर रही है। ये सभी शिक्षित समझदार प्रबुद्ध तेजस्वी स्त्रियाँ हैं। जो स्त्री के दमन और अनाचार के विरूद्ध सवाल उठा रहीं हैं और जो इसे आज तक अप्राप्त है उसे पाना चाहती है वास्तविकता यह है कि महिला, कथा लेखन को उसमें निहित उसके जीवन यथार्थ विडम्बनाओं के सही परिपेक्ष्य में समझकर ही इस साहित्य के साथ न्याय किया जा सकता है। सच तो यही है कि यह लेखन मानवीय जीवन मूल्य और मानवीय जीवन बोध की अपेक्षा में लिखा जा रहा है ।

संदर्भ

1. माध्यम (जुलाई – सितम्बर 2001) स्वातंत्रयोत्तर स्त्री – लेखन : कथा साहित्य, श्रीमति कमल कुमार।
2. राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाएँ – लता सिंह।
3. शोध प्रबंध – डॉ. अनिता श्रीवास्तव।
4. वसुधा मार्च – 2005।
5. मन्नू भण्डारी – '' तीन निगाहों की एक तस्वीर ''।
6. ऊषा प्रियंवदा – पचपन खम्भे लाल दीवारें।
7. ऊषा प्रियंवदा – रूकोगी नहीं राधिका।
8. प्रभा खेतान – छिन्नमस्ता।
9. मौजेषी पुष्पा – हंस पत्रिका।
10. हंस – इदन्नमम आंचलिक संदर्भों में उभरती नारी चेतना का आख्यान – रामधारी सिंह दिनकर का लेख 1994 पृ. 64
11. मैत्रेय पुष्पा – ''विजन'' पृष्ठ – 41।
12. हंस सितम्बर – 1993 अक्षर प्रकाषन दरियागंज दिल्ली।
13. हंस सितम्बर – 1991 अक्षर प्रकाषन दरियागंज दिल्ली।